हम और हिंदी

"हिन्दी का भाग्य आप सभी बोलनेवालों के हृदय में है, बस हिन्दी का आश्रय लीजिए और समस्या अपने आप सुलझ जाएगी। भाषा सरकार की नहीं, जनता की है। भाषा अपनी जाति के चिन्तन और जागृति स्तर का दर्पण है। भाषा में जाति के सभी आत्मिक गुणागुण परिलक्षित होते हैं।"

भारत में चेकोस्लोवाकिया के वर्तमान राजदूत तथा हिन्दी के प्रति समर्पित श्री ओदोलेन स्मेकल का उपर्युक्त कथन आज के सन्दर्भ में कितना सार्थक है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। स्मरण आता है कुछ वर्ष पूर्व कानपुर में आयोजित प्रसिद्ध मानस संगम का वार्षिक समारोह, जिसमें श्री स्मेकल ने हिन्दी के संबंध में अपने उदगार व्यक्त करते हुए कहा था, "चेक मेरी जन्म भाषा है और हिन्दी मेरी कर्म भाषा है।" उस समय वे चेक विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रोफेसर के पद पर कार्यरत थे।

भारत में हिन्दी के प्राध्यापक ने क्या सगर्व ऐसी घोषणा कभी की है? अहिन्दी-भाषी प्रान्तों में स्थिति भिन्न हो सकती है। यहां हिन्दी भाषी प्रान्त में उसके कार्य का उल्लेख अत्यन्त हिचकिचाते हुए संकोचवश किया जाता है। मानो, हिन्दी अध्यापन करना अपराध हो अथवा एक नगण्य कार्य हो, जिससे संस्था की छवि निखरती नहीं है। आगन्तुक आश्चर्यचकित रह जाता है, कि ऐसी विश्वविख्यात संस्था में हिन्दी शिक्षण को भी स्थान दिया गया है। भावना का यह रुप विस्मयजनक होने के साथ-साथ पीड़ादायक भी है। यह छोटा-सा उदाहरण स्थिति स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है।

इसी प्रकार हिन्दी के व्यावहरिक प्रयोग के संबंध में कुछ हास्यास्पद रुप देखने को मिलते हैं। हमारे देश में अंग्रेजी भाषा, सभ्यता एवं सभा-सोसायटी, दूसरे शब्दों में शिष्टता अथवा उच्चस्तर का प्रतीक समझी जाती है। इस तथ्य को साकार रुप देने की प्रक्रिया शैशवकाल से ही प्रारम्भ हो जाती है जब बाल-मस्तिष्क भाषा-जाल से पूर्णतया अपरिचित होते हैं। माता पिता अबोध सन्तान को संज्ञा शब्द अंग्रेजी में तथा क्रिया शब्द हिन्दी में प्रयोग करना सिखाते हैं। बच्चे के मुख से Cow खड़ी है तथा Dogy आ रहा है, आदि वाक्य सुनकर केवल हर्षित ही नहीं होते अपितु स्वयं को गौरवान्वित समझते हुए कहते है कि "बच्चा बिना स्कूली शिक्षा प्राप्त किए कितनी अंग्रेजी सीख गया है।" स्थिति यहां तक पहुंच जाती है कि बच्चा Cow और गाय एवं Dog तथा कुत्ते में समानता स्कूल जाकर ही सीख पाता है।

यहां आशय अन्य भाषा सिखाने से न होकर केवल मातृभाषा के प्रति भावना से है। यह प्रक्रिया केवल घर तक ही सीमित नहीं रहती है। स्कूलों में भी हिन्दी शिक्षा को अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। कई बार शिक्षक भी इसके लिए उत्तरदायी होते हैं। बाल्यकाल से ही निज भाषा अथवा हिन्दी के प्रति हीनता का भाव उत्पन्न करने के लिए किसे दोषी माना जाए - प्रांतीयता, राजनीति अथवा अन्य भाषा के प्रति आसक्ति।

भावना पक्ष के अतिरिक्त दूसरे पहलू पर भी विचार अपेक्षित है। स्वच्छंदता भाषा की प्रकृति है। दूसरे शब्दों में, भाषा किसी प्रकार का बन्धन स्वीकार नही करती। स्वच्छंदता का यह गुण भाषा के परिवर्तन एवं विकास में सहायक होता है । किन्तु, इसका अर्थ यह नहीं कि भाषा का मनमाना प्रयोग किया जाए। हिन्दी भाषा का जो प्रयोग आज देखने में आ रहा है वह चिन्तनीय है।

डा. आशा कपूर, रीडर, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, रुड़की विश्वविद्यालय, रुड़की

दूरदर्शन, आकाशवाणी, निमन्त्रण-पत्र, सूचना-पट्ट इत्यादि में उच्चारण एवं वर्तनी (Spelling) का खुलकर मनमाना प्रयोग किया जा रहा है। इन माध्यमों द्वारा जो भाषा प्रयुक्त की जाती है वह पूर्णतया त्रुटिरहित एवं आदर्श रुप होनी चाहिए। भाषा, इन माध्यमों से शीघ्र सीखी जाती है। भाषा सीखने वाले को जब पुस्तक की भाषा के अतिरिक्त एक भिन्न स्वरुप दिखाई देता है, तो उसके लिए सही रुप क्या है, यह जानना कठिन हो जाता है। प्राय: वह प्रचलित रुप को ही शुद्ध मान लेता है। "श्रीमती" को "श्रीमति" लिखना, "मध्यमवर्गीय" को "माध्यमवर्गीय" पढ़ना तथा "बादल घेराव कर रहे हैं" कहना - ऐसे प्रयोग कहां तक उचित कहे जा सकते हैं। आज ऐसे उदाहरणों को एकत्र किया जाए तो सम्भवत: एक बड़ी पुस्तक तैयार हो जाएगी। प्रश्न यह उठता है कि हिन्दी भाषा के संग इस प्रकार का खिलवाड़ क्यों किया जा रहा है? अक्सर लोगों को यह कहते सुना जाता हे - कौन देखता है, कौन पढ़ता है, कौन सुनता है, सब चलता है। इसका अर्थ यह हुआ कि भाषा स्वच्छंद है, उसका मानक रुप स्थिर करना आवश्यक नहीं है। भाषा की स्वच्छंद प्रकृति इस धारणा को जन्म देगी, ऐसा कभी सोचा नही गया था। आपसी बोलचाल में भाषा का मनमाना प्रयोग सदैव प्रचलित रहा है किन्तु लिखने एवं पढ़ने में इस प्रकार की स्वतंत्रता कभी नहीं रही।

दो शब्द हिन्दी प्रेमियों एवं समर्थकों के प्रति कहना कदाचित- असंगत न होगा। 14 सितम्बर को प्रतिवर्ष "हिन्दी दिवस", कहीं-कहीं हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया जाता है। इस अवसर पर सामान्यतया हिन्दी के प्रचार-प्रसार के संबंध में विविध प्रकार की घोषणाएं तथा पुरस्कार वितरण किए जाते हैं। सर्वत्र हिन्दी की ही चर्चा होती है अथवा यों कहें वातावरण "हिन्दीमय" हो उठता है। किन्तु अगली सुबह सब कुछ पूर्ववत हो जाता है। ऐसा देखा गया है कि हिन्दी दिवस पर जिन्होंने हिन्दी के प्रति अटूट निष्ठा, लगन एवं प्रेम व्यक्त किया था, कहीं-कहीं संकल्प भी लिया था, वे उसके संबंध में बात करना भी निरर्थक समझते हैं या समय पड़ने पर चुप्पी साध लेते हैं। काश! यह भावना पूरे वर्ष बनी रहे। कथनी और करनी का यह भेद, हिन्दी को सम्मानजनक स्थान कभी दिला पाएगा, यह विचारणीय है।

****

बापू की वाणी

- सत्य गोपनीयता से घृणा करता है।
- मनुष्य वही है जो मनुष्य के लिए मरता है।
- क्षमा बलवान कर सकता है, बलहीन नहीं।
- स्वयं पर विजय सबसे बड़ी विजय है।
- सेवा और त्याग से ही सबसे बड़े अधिकार प्राप्त होते हैं।
- परिश्रम वह सुनहरी कुंजी है जो भाग्य के द्वार खोल देती है।
- चोरी करना पाप है, परन्तु उसे छिपाना महा पाप है।
- निर्बल वह नहीं है जो कहा जाता है, बल्कि वह है जो अपने आप को निर्बल समझता है।
- मैं कथनी की अपेक्षा करनी में अधिक विश्वास करता हूं।
- धर्म का आभूषण वैराग्य है, वैभव नहीं।
- जो दूसरों को जीतता है वह वीर है, परन्तु जो दूसरों के मन को जीतता है, वह महान है।
- ताकत के सामने झुकना कायरता की निशानी है।
- काम की अधिकता नहीं, उसकी अनियमितता मनुष्य को मार डालती है।

****